ट्रॉट्स्कीवादियों से सैद्धांतिक वार्तालाप - 5

ट्रॉट्स्कीवाद की जड़ें लासालवाद में हैं, मार्क्सवाद में नहीं

श्यामसुंदर

वार्त्तालाप की विगत चार किश्तों में भिन्न–भिन्न पहलुओं से यह दर्शाया गया है कि ट्रॉट्स्की ने किस प्रकार मार्क्सवाद–लेनिनवाद विरोधी अपने 'स्थायी क्रांति' के सिद्धांत को हथियार बनाकर क्रांति के दो चरणों वाले मार्क्सवादी–लेनिनवादी सिद्धांत को 'स्टालिनवाद' का नाम देकर ढहाने की कुचेष्टा की है। वार्त्तालाप की इस पांचवीं किश्त का विषय ट्रॉट्स्कीवाद के इस दावे को खोखला सिद्ध करना है कि स्थायी क्रांति का ट्रॉट्स्कीवादी सिद्धांत पूंजीवाद के साम्राज्यवादी युग की परिस्थितियों की उपज है। स्थायी क्रांति का ट्रॉट्स्कीवादी सिद्धांत असल में लासालवादी प्रस्थापना (1848) का ही एक संशोधित और विकसित रूप है, और इस तथ्य को छुपाने के लिए ही ट्रॉट्स्की ने वर्षों बाद इस प्रस्थापना की लासालवादी नग्नता को ढकने के लिए इस पर 'साम्राज्यवादी परिस्थितियों की उपज होने' का पर्दा डाल दिया। असल में स्थायी क्रांति संबंधी ट्रॉट्स्कीवादी प्रस्थापना का साम्राज्यवादी युग और इस युग की परिस्थितियों से लेशमात्र भी लेनादेना नहीं है और इस प्रकार की दलील मजदूर वर्ग की आंखों में महज धूल झोंकने के अलावा और कुछ नहीं है। यह क्रांति के मार्क्सवादी–लेनिनवादी दो चरणों वाले सिद्धांत को लासालवादी–ट्रॉट्स्कीवादी स्थायी क्रांति के सिद्धांत से विस्थापित करने की साजिश है। ट्रॉट्स्की ने अपने स्थायी क्रांति के सिद्धांत को 1906 में लिखी अपनी पुस्तक 'परिणाम और संभावनाएं' (Results and Prospects) के माध्यम से प्रस्तुत किया और इस पुस्तक में ट्रॉट्स्की ने साम्राज्यवादी युग के चरित्र–चित्रण अथवा विश्लेषण की बात तो दूर कहीं भी साम्राज्यवादी युग का जिक्र तक नहीं किया, जबकि लासाल द्वारा 1848 में निष्कर्षित उस प्रस्थापना का उल्लेख है जो ट्रॉट्स्की के स्थायी क्रांति संबंधी उक्त पुस्तक के सिद्धांत से बिल्कुल भी भिन्न नहीं है। आइए, इस विषय पर बिन्दुवार चर्चा करें।

1.

ट्रॉट्स्कीवादियों का यह कथन एक सफेद झूठ और कोरी गप्प है कि ट्रॉट्स्की का स्थायी क्रांति का सिद्धांत साम्राज्यवादी युग की परिस्थितियों की उपज है

साथी त्यागी बहस के दौरान 17 सितम्बर की अपनी एक पोस्ट में पूरे आत्मविश्वास के साथ लिखते हैं,

> *"यह निष्कर्ष कि साम्राज्यवाद के युग में, जनवादी क्रांतियां, पश्चिम की पुरानी बुर्जुआ–जनवादी क्रांतियों के विपरीत, सर्वहारा समाजवादी क्रांति से पहले और एक अलग चरण के रूप में नहीं, बल्कि उसके अकाट्य हिस्से के रूप में ही सम्पन्न होंगी, युगांतरकारी निष्कर्ष था। इस निष्कर्ष पर सबसे पहले और सार्वधिक सटीकता से पहुंचने का श्रेय, लियोन ट्रॉट्स्की को हासिल है।..."*

कमाल! पूर्णतः आधारहीन और सौ प्रतिशत झूठे दावे करना कोई ट्रॉट्स्कीवादियों से सीखे! ट्रॉट्स्कीवादी अपनी हर सांस में दावा करते हैं कि ट्रॉट्स्की का यह 'युगांतरकारी' सिद्धांत पूंजीवाद के साम्राज्यवादी युग का सिद्धांत है जो उनकी 'मेधा' ने सर्वप्रथम 1906 में ईज़ाद किया और इस सिद्धांत के मुताबिक क्रांति को जनवादी एवं समाजवादी चरणों में नहीं बांटा जा सकता बल्कि क्रांति का आरंभ ही सर्वहारा वर्ग के एकल अधिनायकत्व की स्थापना से होगा और सर्वहारा का यही एकल अधिनायकत्व क्रांति के 'सभी' चरणों को सम्पन्न करेगा। लेकिन ट्रॉट्स्की द्वारा लिखी गई उनकी पुस्तक 'परिणाम और सम्भावनाएं'(1906) के किसी भी पृष्ठ पर साम्राज्यवादी युग और उनके स्थायी क्रांति के सिद्धांत के संबंध का कोई हवाला नहीं है। ध्यान देने की बात यह भी है कि साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रांति के युग के चारित्रिक लक्षणों की पहचान सर्वप्रथम लेनिन ने 1915–1916 में की है और उन्होंने 1905 से लेकर फरवरी 1917 की क्रांति तक रूसी क्रांति के चरण को बुर्जुआ जनवादी चरण बताया था और इस चरण में उन्होंने बुर्जुआ जनवादी क्रांति को निर्णायक ढंग से सम्पन्न करने के लिए 'सर्वहारा वर्ग और किसान वर्ग के क्रांतिकारी जनवादी अधिनायकत्व' का कार्यक्रम निर्धारित किया था। तो सवाल उठता है कि क्या ट्रॉट्स्की 1905–1906 में यानी लेनिन से 10 वर्ष पूर्व ही साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रांति के युग के निष्कर्ष पर पहुंच चुके थे और अपनी इसी समझ के आधार पर उन्होंने 1906 में ही लेनिन से भी 'एक कदम आगे बढ़कर' सर्वहारा वर्ग के एकल अधिनायकत्व का कार्यक्रम प्रस्तुत कर दिया था? यदि ऐसा है तो फिर ट्रॉट्स्की द्वारा लिखे उनके 1905–06 के लेखों में ही इस तथ्य की पुष्टि होनी चाहिए कि ट्रॉट्स्की ने 1905–06 में अपनी 'स्थायी क्रांति' का सिद्धांत साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रांति के युग को आधार बनाकर ही आगे बढ़ाया था। लेकिन ट्रॉट्स्की की पुस्तक 'परिणाम और संभावनाएं' जोकि उन्होंने 1906 में लिखी थी, के किसी भी अध्याय में इस बात की भनक तक नहीं है कि ट्रॉट्स्की को उस वक्त पूंजीवाद के साम्राज्यवादी युग के बारे तनिक भी जानकारी हो। *अतः ट्रॉट्स्की का यह दावा बिल्कुल बेबुनियाद व निराधार है कि उनका स्थायी क्रांति का सिद्धांत साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रांति के युग का उन द्वारा किये गए चरित्र–चित्रण और विश्लेषण पर आधारित*

है/ साथी राजेश त्यागी द्वारा ट्रॉट्स्कीवाद की दी गई 25 मूल प्रस्थापनाओं में से 19वीं प्रस्थापना भी कहती है कि: "क्रांति को जनवादी और समाजवादी दो अलग मंजिलों में नहीं बांटा जा सकता, ये एक ही क्रांति के दो रंग हैं, जो सर्वहारा के एकल अधिनायकत्व से बंधे हैं। जनवाद और समाजवाद के कार्यभार भी साम्राज्यवाद की परिस्थितियों में आपस में गुंथ गए हैं, जिन्हें अलग नहीं किया जा सकता।" असल में तो यही मनगढंत प्रस्थापना ही ट्रॉट्स्कीवाद की सभी प्रस्थापनाओं का मूलाधार है, चाहे उन प्रस्थापनाओं को आप कितनी भी संख्याओं में भिन्न–भिन्न तरीकों से लिखें, 20 में या 25 में। लेकिन क्या साथी राजेश त्यागी हमें स्पष्ट रूप में बता या दिखा सकते हैं कि ऊपर उद्धृत की गई ट्रॉट्स्कीवाद की मूल प्रस्थापना का यह फिकरा कि "जनवाद और समाजवाद के कार्यभार भी साम्राज्यवाद की परिस्थितियों में आपस में गुंथ गए हैं, जिन्हें अलग नहीं किया जा सकता", ट्रॉट्स्की की पुस्तक *परिणाम और संभावनाएं* (1906) के कौन से अध्याय में है? और यदि वे इस उक्त फिकरे को ट्रॉट्स्की की उक्त पुस्तक के किसी भी अध्याय में नहीं दिखा सकते तो फिर बतायें कि ट्रॉट्स्की के दिमाग में यह ऊल–जलूल एवं मार्क्सवाद–लेनिनवाद विरोधी प्रस्थापना कहां से टपकी? हकीकत यह है कि क्रांति के जनवादी अधिनायकत्व के चरण को लांघ जाने और क्रांति के दो चरणों वाले मार्क्सवादी–लेनिनवादी सिद्धांत के स्थान पर, सर्वहारा वर्ग के एकल अधिनायकत्व से ही क्रांति के आरंभ होने की प्रस्थापना सन् 1848 में फर्डीनेंड लासाल द्वारा दी गई थी, जिसका उल्लेख खुद ट्रॉट्स्की ने 1906 में लिखी अपनी पुस्तक *परिणाम और संभावनाएं* में किया है और असल में उसे ही ट्रॉट्स्की ने अपने 'स्थायी क्रांति' के सिद्धांत का आधार बनाया है। देखें बिन्दु दो।

2.

असल में ट्रॉट्स्की ने लासाल की विरासत को अंगीकार किया, उसे समृद्ध और विकसित किया तथा उसे मार्क्सवाद–लेनिनवाद विरोधी अपने 'स्थायी क्रांति' के सिद्धांत का आधार बनाया

ट्रॉट्स्की की पुस्तक में उनके 'स्थायी क्रांति' के सिद्धांत के आधार के रूप में ट्रॉट्स्कीवादी पूंजीवाद के साम्राज्यवादी युग तथा उससे उपजी परिस्थितियां बताते हैं लेकिन साम्राज्यवादी युग के बारे में उक्त पुस्तक में एक भी शब्द नहीं है तो फिर प्रश्न उठता है कि ट्रॉट्स्की के 'स्थायी क्रांति' के सिद्धांत का मार्क्सवादी आधार क्या है? इसका उत्तर यही है कि ट्रॉट्स्कीवाद का आधार न तो मार्क्स–एंगेल्स की किसी मूलभूत शिक्षा पर टिका है और न ही खुद ट्रॉट्स्की के किसी अपने मौलिक मार्क्सवादी विश्लेषण पर। असल में ट्रॉट्स्की अपने स्थायी क्रांति के सिद्धांत के आधार के रूप में लासाल के मार्क्सवाद विरोधी उस निष्कर्ष का उपयोग करते हैं जो निष्कर्ष लासाल ने 1848 में जर्मनी और हंगरी की बुर्जुआ जनवादी क्रांतियों के असफल रह जाने के अपने निजी विश्लेषण के जरिये निकाला था। इस बारे ट्रॉट्स्की ने अपनी उक्त पुस्तक में लासाल द्वारा मार्क्स को लिखे 24 अक्तूबर 1848 के पत्र का हवाला दिया है जिसमें लासाल ने अपने उक्त निष्कर्ष को लिखा है। 24 अक्तूबर 1848 को लिखे मार्क्स के नाम लासाल के उक्त पत्र के कुछ अंशों को ट्रॉट्स्की ने अपनी 'आधारभूत' पुस्तक 'परिणाम और संभावनाएं' (1906) में उद्धृत किया है और दिखाया है कि लासाल ने हंगरी और जर्मनी की क्रांतियों की असफलता के अपने विश्लेषण से निष्कर्ष निकाला था कि भविष्य में यूरोप में जो भी क्रांति होगी वह जनवादी न होकर आरंभ से ही समाजवादी क्रांति होगी तथा समाजवादी क्रांति के सिवाय कोई अन्य क्रांति सफल नहीं हो सकती दूसरे शब्दों में भविष्य में होने वाली क्रांति लासाल के अनुसार सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व से आरंभ होगी। ट्रॉट्स्की ने सन् 1848 वाले लासाल के इसी निष्कर्ष को सन् 1906 में अपने स्थायी क्रांति के सिद्धांत के रूप में प्रतिपादित किया। लासाल के उक्त पत्र के अंशों को उद्धृत करते हुए ट्रॉट्स्की 1906 में अपनी पुस्तक में लिखते हैं:

> "From the experience of the Hungarian and German revolutions Lassalle drew the conclusion that from now on revolutions could only find support in the class struggle of the proletariat. In a letter to Marx dated 24th October, 1848, Lassalle writes: 'Hungary had more chances than any other country of bringing its struggle to a successful outcome. Among other reasons this was because the party there was not in a state of division and sharp antagonism as it was in Western Europe; because the revolution, to a high degree, had taken the form of a struggle for national independence. Nevertheless, Hungary was defeated, and precisely as a consequence of the treachery of the national party.'
>
> " 'This, and the history of Germany during 1848-49,' continues Lassalle, 'brings me to the conclusion that no revolution can be successful in Europe, unless it is from the very first proclaimed to be purely socialistic. No struggle can be successful if social questions enter into it only as a sort of hazy element, and remain in the background, and if it is carried on under the banner of national! Regeneration or bourgeois republicanism.'
>
> "We shall not stop to criticise these very decided conclusions. It is undoubtedly true, however, that already in the middle in the nineteenth century the problem of political emancipation could not be solved by the unanimous and concerted tactics of the pressure of the whole nation. Only the independent tactics of the proletariate, gathering strength for the struggle from its class position, and only from its class position could have secured victory for the revolution." (Results and Prospects, Chapter- 4)

अब देखिये कि हंगरी और जर्मनी की बुर्जुआ–जनवादी क्रांतियों की असफलता के आधार पर सन् 1848 में लासाल द्वारा निकाले गये निष्कर्ष को ही ट्रॉट्स्की भी निहायत निर्णायक निष्कर्ष बताते हुए उसे अपना पूरा समर्थन देते हैं, उसे अंगीकार करते हैं। ट्रॉट्स्की को इस बात पर विचार करने की जरा भी जरूरत महसूस नहीं हुई कि लासाल द्वारा निकाले गये निष्कर्ष पर मार्क्स ने अपनी सहमति प्रकट की थी अथवा नहीं। क्या मार्क्स को एक पत्र के जरिए

लासाल द्वारा अपने निजी निष्कर्ष भर लिख देना ही ट्रॉट्स्की के लिए पर्याप्त मार्क्सवाद है? सवाल यह है कि मार्क्स भी लासाल के उक्त निष्कर्ष से सहमत हुए थे या नहीं? ट्रॉट्स्की को चाहिए था कि वह ऐसा कोई प्रमाण अपनी उक्त पुस्तक में लाते और यह प्रमाणित करते कि कार्ल मार्क्स ने भी लासाल के उक्त निष्कर्ष से अपनी सहमति प्रकट की थी। नहीं तो लासाल के उक्त निष्कर्ष का मार्क्सवादियों के लिए क्या महत्व है? क्या ट्रॉट्स्की की इस चिंतन प्रणाली और व्यवहार से यही सिद्ध नहीं होता है कि ट्रॉट्स्की 1906 में मार्क्सवाद से गद्दारी करते हुए और मार्क्सवादी पटरी से पूर्णतः अपना कांटा बदलकर लासालवादी पटरी पर चढ़ गए थे? और तब से ही ट्रॉट्स्की मार्क्सवादी न होकर लासालवादी है और मार्क्सवाद को लासालवाद से विस्थापित करने का षडयंत्र कर रहे हैं।

ट्रॉट्स्की के लासालवादी होने का एक और पुख्ता प्रमाणः ट्रॉट्स्की ने अपनी पुस्तक ' Results and Prospects' (1906) में लिखा कि "Socialism is not merely a question of equal distribution but also a question of planned production…" (Ch. 7) अर्थात् ट्रॉट्स्की कहते हैं कि समाजवाद महज़ समान वितरण का ही नहीं है बल्कि नियोजित उत्पादन का भी प्रश्न है। और समाजवाद की यह 'समान वितरण' वाली समझ लासालवादी समझ है, मार्क्सवादी नहीं। मार्क्सवाद और लासालवाद में इस बिन्दु पर स्पष्टता हासिल करने के लिए ट्रॉट्स्कीवादी मार्क्स की रचना *'गोथा कार्यक्रम की आलोचना'* पढ़ सकते हैं, जिसमें मार्क्स ने लासालवादी अवधारणाओं की ही आलोचना की है। कम्युनिज्म के प्रथम चरण जिसे आमतौर पर समाजवाद कहा जाता है, में वितरण व्यक्तियों की अपनी–अपनी योग्यता और कार्यों के आधार पर ही किया जाता है। यानी 'योग्यता के अनुसार काम और काम के अनुसार दाम' के नियम के आधार पर होता है लेकिन मानव द्वारा मानव के शोषण पर पूर्ण पाबंदी लग जाती है। कम्युनिज़्म की दूसरी अवस्था में वितरण 'क्षमता के अनुसार काम और आवश्यकता के अनुसार सामान' के आधार पर तय होता है। अतः ट्रॉट्स्की द्वारा यह लिखा जाना कि समाजवाद समानता के आधार पर वितरण का सवाल है एक लासालवादी प्रस्थापना है। ट्रॉट्स्की का स्थायी क्रांति का सिद्धांत भी मार्क्स–एंगेल्स और लेनिन के स्थायी क्रांति के मौलिक सिद्धांत के लासालवादीकरण के अलावा और कुछ नहीं है।

3.

ट्रॉट्स्की का स्थायी क्रांति का सिद्धांत मार्क्स–एंगेल्स के स्थायी क्रांति के मौलिक सिद्धांत का लासालवादीकरण है

हम जानते हैं कि जर्मन बुर्जुआ वर्ग सन् 1848 की बुर्जुआ जनवादी क्रांति के साथ गद्दारी करते हुए सामंती सम्राटशाही की गोद में जा बैठा था और इस अनुभव के बाद ही मार्क्स ने कहा था कि अब बुर्जुआ वर्ग जनवादी क्रांति का नेतृत्व करने की क्षमता खो चुका है। उन्होंने तब के बाद सर्वहारा वर्ग और निम्न–पूंजीवादी वर्ग (मुख्यतः किसान वर्ग) के संश्रय पर आधारित क्रांतिकारी जनवादी अधिनायकत्व का मार्ग दिखाया था जिसे लेनिन ने अपनी रचना 'दो कार्यनीतियां' में वर्णित सर्वहारा वर्ग और किसान वर्ग के क्रांतिकारी जनवादी अधिनायकत्व का आधार बनाया था। मार्क्स और एंगेल्स ने जर्मनी की जनवादी क्रांति की विफलता के बाद 1850 में *कम्युनिस्ट लीग के नाम केंद्रीय समिति का संदेश* में स्थायी अथवा निरंतर क्रांति के चरणों का भी स्पष्ट तौर पर वर्णन किया था। उन्होंने कहा था कि सर्वहारा वर्ग पहले निम्न–पूंजीवादी वर्ग से संश्रय करते हुए क्रांतिकारी जनवादी अधिनायकत्व की मंजिल को पूरा करेगा और फिर सर्वहारा अधिनायकत्व की स्थापना करते हुए अपने अंतिम ध्येय तक यानी विश्व समाजवादी क्रांति के ध्येय के पूरा होने तक क्रांति की निरंतरता को जारी रखेगा। मार्क्स–एंगेल्स और लेनिन की शिक्षाओं के अनुसार स्थायी क्रांति सर्वहारा अधिनायकत्व से आरंभ नहीं होती बल्कि सर्वहारा अधिनायकत्व की स्थापना उसका अगला चरण होगा लेकिन ट्रॉट्स्की की स्थायी क्रांति का आरंभ ही सर्वहारा अधिनायकत्व से होता है और स्थायी क्रांति के मार्क्सवादी–लेनिनवादी मौलिक सिद्धांत में ऐसा बदलाव करते हुए ट्रॉट्स्की ने स्थायी क्रांति के मार्क्सवादी–लेनिनवादी सिद्धांत का लासालवादीकरण कर दिया, क्योंकि सन् 1848 में लासाल ने ही यूरोप के संदर्भ में यह प्रस्थापना दी थी कि तब से आगे क्रांति सीधे समाजवादी क्रांति यानी सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व से आरंभ होगी और लासाल की इसी प्रस्थापना को ट्रॉट्स्की ने सन् 1906 में पूर्व के देशों के संदर्भ में भी लागू कर दिया। मार्क्स–एंगेल्स ने स्थायी क्रांति की जिस प्रक्रिया का वर्णन *कम्युनिस्ट लीग के नाम केंद्रीय समिति का संदेश* में 1850 में किया था वह एक चरणबद्ध प्रक्रिया है। मार्क्स–एंगेल्स लिखते हैंः

> "निम्नपूंजीवादी जनवादियों के साथ क्रांतिकारी मज़दूर पार्टी का संबंध इस प्रकार है– वह उनके साथ उस धड़े के ख़िलाफ़ मिलकर चलती है जिसे उलटना उसका लक्ष्य है, वह हर उस चीज़ के मामले में उनका विरोध करती है जिसकी मदद से वे अपने हितार्थ अपनी स्थिति मज़बूत बनाने का प्रयास करते हैं।" (संकलित रचनाएं तीन खंडों में, खंड 1, भाग 1, पृष्ठ 220)

मार्क्स–एंगेल्स आगे लिखते हैंः

> "...परंतु ये मांगें सर्वहारा वर्ग की पार्टी के लिये पर्याप्त नहीं हो सकतीं। जनवादी निम्नपूंजीपति वर्ग जहां यथाशीघ्र तथा हद से हद ऊपरलिखित मांगों की पूर्ति के साथ क्रांति का समापन करना चाहते हैं, वहां हमारे हित तथा हमारे कार्यभार इस बात में निहित हैं कि जब तक कमोबेश तमाम संपत्तिधारी वर्गों को उनकी आधिपत्यकारी स्थिति से बाहर नहीं धकेल दिया जाता, जब तक सर्वहारा वर्ग राजसत्ता हासिल नहीं कर लेता, एक ही देश में नहीं वरन् दुनिया के समस्त प्रभुत्वशाली देशों में सर्वहाराओं का साहचर्य जब तक इतना आगे नहीं बढ़ जाता कि इन देशों के सर्वहाराओं के बीच प्रतियोगिता बन्द हो जाये तथा कम से कम निर्णायक उत्पादक शक्तियां सर्वहाराओं के हाथों में केंद्रित हो जायें, *तब तक हम क्रांति को स्थायी बनाएं।*' (वही, पृष्ठ 221–22, जोर हमारा)

आगे फिर लिखते हैंः

> "...इसमें संदेह की कोई गुंज़ाइश नहीं है कि क्रांति के और विकास के दौरान निम्नपूंजीवादी जनवाद जर्मनी में कुछ देर के लिये प्रभुत्वपूर्ण स्थिति ग्रहण करेगा। इसलिए प्रश्न यह है कि सर्वहारा वर्ग तथा विशेष रूप से लीग का इसके संबंध में क्या रुख़ होगाः

1. वर्तमान अवस्थाओं के जारी रहने के दौरान जब निम्नपूंजीवादी जनवादी भी उसी तरह उत्पीड़ित हैं;
2. आगामी क्रांतिकारी संघर्ष के दौरान जब उनका पलड़ा भारी होगा;
3. इस संघर्ष के बाद, उलट दिये जाने वाले वर्गों तथा सर्वहारा वर्ग पर प्रभुत्व की अवधि के दौरान।" (वही, पृष्ठ 222)

निम्न–पूंजीपति वर्ग के मनसूबों बारे चेतावनी देते हुए मार्क्स–एंगेल्स फिर लिखते हैं:

> "...वह सर्वहारा वर्ग के रास्ते में खड़ा होकर उसे विजय के फलों का रसास्वादन नहीं करने देगा। निम्नपूंजीवादी जनवादियों को इससे रोकना मज़दूरों की ताक़त के बाहर की चीज़ है, लेकिन मज़दूर उनके लिये सशस्त्र सर्वहारा वर्ग के ख़िलाफ़ अपना पलड़ा भारी बनाना यक़ीनन कठिन बना सकते हैं, और उन पर ऐसी शर्तें लाद सकते हैं कि पूंजीवादी जनवादियों के शासन में शुरू से ही उनके पतन के बीज मौजूद रहें, और सर्वहारा वर्ग के शासन द्वारा कालांतर में उन्हें बाहर खदेड़ना काफ़ी हद तक सुगम हो सके।" (वही, पृष्ठ 223)

सर्वहारा वर्ग को इसी खतरे बारे और सचेत करते हुए फिर लिखते हैं:

> "...हथियारों तथा बारूद को किसी भी बहाने की आड़ में नहीं त्यागा जाना चाहिये; निरस्त्र करने की हर कोशिश को नाकाम बनाया जाना चाहिये, जरूरत पड़े तो हथियारों के बल से मज़दूरों पर पूंजीवादी जनवादियों के प्रभाव को नष्ट करना, तत्काल मज़दूरों का स्वतंत्र तथा सशस्त्र संगठन बनाना तथा पूंजीवादी जनवाद के अनिवार्य अस्थायी शासन के लिये यथासंभव कठिनाई तथा संकट उत्पन्न करने वाली परिस्थितियां लागू करना –ये हैं वे ख़ास मुद्दे जिन्हें सर्वहारा तथा इस कारण लीग को आसन्न विप्लव के दौरान तथा उसके बाद ध्यान में रखना होगा।" (वही, पृष्ठ 225)

फिर लिखते हैं कि:

> "...नई सरकारें ज्यों ही अपनी स्थिति कुछ हद तक मज़बूत बना लेंगी, मज़दूरों के ख़िलाफ़ उनका संघर्ष शुरू हो जायेगा। इसलिये जनवादी निम्नपूंजीपति वर्ग का प्रबल विरोध कर सकने के लिये सर्वोपरि यह आवश्यक है कि मज़दूर क्लबों में स्वतंत्र रूप से संगठित हों तथा केंद्रीकृत हों।" (वही, पृष्ठ 225)

संदेश के अंत में मार्क्स–एंगेल्स फिर लिखते हैं:

> "परंतु अपनी अंतिम विजय के लिए उन्हें स्वयं अधिकतम काम करना होगा, इसके लिए उन्हें अपने दिमाग में यह चीज़ साफ कर लेनी होगी कि उनके वर्ग हित क्या हैं, इसके लिए उन्हें शीघ्रातिशीघ्र एक स्वतंत्र पार्टी के रूप में अपनी स्थिति ग्रहण करनी होगी, इसके लिए उन्हें एक क्षण के लिए भी जनवादी निम्नपूंजीपतियों के ऐसे पाखंडपूर्ण शब्दजाल के बहकावे में नहीं आना चाहिए जो उन्हें सर्वहारा का स्वतंत्र संगठन बनाने से रोके। *उनका युद्धनाद हो, 'क्रांति स्थायी हो!'*" (वही, पृष्ठ 229, जोर हमारा)

इस प्रकार मार्क्स–एंगेल्स की स्थायी क्रांति की प्रक्रिया का आरंभ सीधे सर्वहारा वर्ग के एकल अधिनायकत्व से नहीं होता बल्कि क्रांतिकारी बुर्जुआ जनवादी अधिनायकत्व से आरंभ होता है जबकि लासालवाद–ट्रॉट्स्कीवाद के अनुसार स्थायी क्रांति की प्रक्रिया का आरंभ ही सर्वहारा अधिनायकत्व से होता है। सितम्बर 1905 के अपने एक लेख में लेनिन ने भी सतत, स्थायी अथवा निरंतर क्रांति का उल्लेख किया है और लेनिन का यह लेख भी मार्क्स–एंगेल्स के स्थायी क्रांति के सिद्धांत की ही अभिव्यक्ति है जिसे ट्रॉट्स्कीवादी अपनी समझ का हिस्सा नहीं बनाते। सितम्बर 1905 में लेनिन ने अपने लेख '*किसान आंदोलन के प्रति सामाजिक–जनवाद का रुख*' में स्थायी क्रांति का आरंभ सीधे सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व से न करके सर्वहारा वर्ग और किसान वर्ग के क्रांतिकारी जनवादी अधिनायकत्व से करते हैं और उसके बाद सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व पर पहुंचते हैं। देखें, लेनिन ने लिखा:

> "...जनवादी क्रांति के पूर्णतः विजयी हो जाने की हालत में उसका अर्थ राष्ट्रीयकरण भी हो सकता है और मज़दूर संघों को बड़े पूंजीवादी ताल्लुकों की सुपुर्दगी भी, क्योंकि जनवादी क्रांति से हम फौरन ही और अपनी शक्तियों के पैमाने के अनुरूप, वर्ग चेतन और संगठित सर्वहारा वर्ग की शक्तियों के पैमाने के अनुरूप समाजवादी क्रांति में संक्रमण करना प्रारंभ कर देंगे। हम निरंतर क्रांति के पक्षपाती है। हम आधे रास्ते में रूकने वाले नहीं हैं।" (संकलित रचनाएं दस खंडों में, खंड–3, पृष्ठ 193)

4.

कार्ल मार्क्स द्वारा एंगेल्स को लिखे 16 अप्रैल 1856 के पत्र का महत्व और उसकी लेनिन एवं ट्रॉट्स्की द्वारा की गई अलग–अलग व्याख्याओं के बारे में

सन् 1848 में जब जर्मन पूंजीपति वर्ग जनवादी क्रांति से विश्वासघात करते हुए सम्राटशाही की शरण में जा बैठा तब मार्क्स ने जनवादी क्रांति की रणनीति को सर्वहारा वर्ग और निम्न–पूंजीपति वर्ग (मुख्यतः किसानों) के संश्रय पर आधारित किया था। इसी की और पुष्टि करते हुए एंगेल्स को मार्क्स ने 16 अप्रैल 1856 को अपने एक पत्र में लिखा था,

> "…The whole thing in Germany will depend on the possibility of backing the proletarian revolution by some second edition of the Peasant War. Then the affair will be splendid…" (Selected correspondence, page 86)

अर्थात् मार्क्स लिखते हैं किसी दूसरे किसान युद्ध द्वारा सर्वहारा क्रांति का समर्थन किये जाने की संभावना पर ही जर्मनी में सब कुछ निर्भर होगा। तब सब बात ठीक बैठेगी।

सवाल है कि इस पत्र में मार्क्स जब जर्मनी में किसान युद्ध द्वारा समर्थित सर्वहारा क्रांति की बात कर रहे हैं तो क्या वे सर्वहारा अधिनायकत्व की बात कर रहे हैं? हरगिज़ नहीं। यहां मार्क्स सर्वहारा के नेतृत्व में सर्वहारा वर्ग और जनवादी क्रांतिकारी किसान वर्ग के संश्रय पर आधारित क्रांतिकारी जनवादी अधिनायकत्व की बात कर रहे हैं। कार्ल मार्क्स के उक्त पत्र की व्याख्या एंगेल्स और लेनिन ने जर्मनी में क्रांति के जनवादी चरण के रूप में की जबकि ट्रॉट्स्की ने इसी पत्र की व्याख्या *लेनिन की मृत्यु के बाद* सर्वहारा वर्ग के एकल अधिनायकत्व के रूप में यानी अपने स्थायी क्रांति के लासालवादी सिद्धांत के अनुरूप की।

लेनिन द्वारा की गई व्याख्याः

मार्क्स के उक्त 16 अप्रैल 1856 के पत्र का हवाला देते हुए लेनिन ने 'कार्ल मार्क्स' पर अपने निबंध में लिखा कि,

> "...जब 1848–1849 का अंतिम क्रांतिकारी दौर ख़त्म हो गया, तब मानो 'शांतिमय ढंग से' नयी क्रांतियों की तैयारी करने वाले नये दौर में काम करने की क्षमता की मांग करते हुए मार्क्स क्रांति के साथ हर प्रकार के खिलवाड़ के विरोध में खड़े हो गये...। मार्क्स ऐसे काम को किस भावना के साथ चलाने की मांग करते थे, यह बात 1856 के अधिकतम प्रतिगामी काल में जर्मनी की परिस्थिति के उनके इस मूल्यांकन में देखी जा सकती हैः 'जर्मनी में सारा मामला किसान युद्ध के किसी द्वितीय संस्करण द्वारा सर्वहारा क्रांति के समर्थन की संभावना पर निर्भर होगा'। *जब तक जर्मनी में जनवादी बुर्जुआ क्रांति सम्पन्न नहीं की गई थी* तब तक मार्क्स ने समाजवादी सर्वहारा वर्ग की कार्यनीति में किसानों की जनवादी शक्ति के विकास पर ही सारा ध्यान केन्द्रित किया।" (मार्क्सवाद के ऐतिहासिक विकास की कुछ विशेषताएं, पृष्ठ 61, जोर हमारा)

दिए गए इस उद्धरण से पूर्णतः स्पष्ट है कि लेनिन ने मार्क्स के उक्त पत्र की व्याख्या क्रांति के जनवादी चरण के तौर पर की है क्योंकि लेनिन ने स्पष्ट लिखा है कि "जब तक जर्मनी में जनवादी बुर्जुआ क्रांति सम्पन्न नहीं की गई थी तब तक मार्क्स ने समाजवादी सर्वहारा वर्ग की कार्यनीति में किसानों की जनवादी शक्ति के विकास पर ही सारा ध्यान केन्द्रित किया"। एंगेल्स ने भी मार्क्स के उक्त पत्र में 'किसान युद्ध द्वारा समर्थित सर्वहारा क्रांति' की रणनीति को बुर्जुआ जनवादी क्रांति की ही रणनीति माना था न कि किसानों द्वारा समर्थित एकल सर्वहारा अधिनायकत्व की रणनीति। इस संदर्भ में एंगेल्स के कई उद्धरण वार्त्तालाप की किश्त चार में दिये जा चुके हैं। फिर भी एक संक्षिप्त उद्धरण एंगेल्स द्वारा बर्नस्टीन को लिखे 27 अगस्त 1883 के पत्र से इस प्रकार हैः

> "… In our country too the first and direct result of the revolution with regard to the form can and must be nothing but the bourgeois republic. But this will be here only a brief transitional period because fortunately we do not have a purely republican bourgeois party…"

अर्थात् हमारे देश में भी अवस्था के लिहाज से क्रांति का प्रथम और सीधा परिणाम अनिवार्य तौर पर एक पूंजीवादी गणतंत्र के अलावा और कुछ नहीं हो सकता परंतु यह यहां केवल एक अल्पावधि का संक्रमण काल होगा क्योंकि सौभाग्य से हमारे यहां कोई खालिस पूंजीवादी गणतांत्रिक पार्टी का वजूद नहीं है।

यदि एंगेल्स मार्क्स के उक्त पत्र की रणनीति यानी किसान युद्ध द्वारा समर्थित सर्वहारा क्रांति की व्याख्या किसानों द्वारा समर्थित सर्वहारा वर्ग के एकल अधिनायकत्व के रूप में करते जैसा कि लासालवाद–ट्रॉट्स्कीवाद करता है तो एंगेल्स कभी भी यह न कहते कि जर्मनी में "क्रांति का प्रथम और सीधा परिणाम अनिवार्य तौर पर एक पूंजीवादी गणतंत्र के अलावा और कुछ नहीं हो सकता"। लेकिन ट्रॉट्स्की लेनिन की तो क्या एंगेल्स की भी कोई परवाह नहीं करते। प्रश्न है कि क्या ट्रॉट्स्की मार्क्स के लेखों का अर्थ एंगेल्स से भी ज्यादा गहनता और सटीकता से समझते हैं? दूसरी बात यह कि ट्रॉट्स्की ने मार्क्स के उक्त पत्र की रणनीति की 'किसानों द्वारा समर्थित सर्वहारा वर्ग के एकल अधिनायकत्व' के रूप में व्याख्या अपनी 1906 की पुस्तक 'परिणाम और संभावनाएं' में नहीं की, यानी जब लेनिन जीवित थे, बल्कि लेनिन की मृत्यु के बाद लिखी अपनी पुस्तक 'द परमानेंट रिवोल्यूशन' (1928) में की। इसे ट्रॉट्स्की की हद दर्जे की कायरता कहें या हद दर्जे की कुटिलता!

लेनिन कार्ल मार्क्स पर लिखे निबंध की भूमिका (14 मई 1918) में मार्क्स के 16 अप्रैल 1856 के पत्र के रूसी क्रांति के दो अलग–अलग चरणों यानी जनवादी और समाजवादी चरणों में अलग–अलग महत्व को दर्शाते हुए लिखते हैंः

> "कार्ल मार्क्स संबंधी मेरा जो लेख इस समय अलग से प्रकाशित हो रहा है, जहां तक मुझे याद है, मैंने उसे 1913 में ग्रानात विश्वकोश के लिए लिखा था। मार्क्स से संबंध रखने वाली पुस्तकों की एक लंबी सूची लेख के अंत में जोड़ दी गयी थी, जिसमें अधिकांश पुस्तकें विदेशी थीं। प्रस्तुत संस्करण में वह सूची छोड़ दी गयी है। विश्वकोश के संपादकों ने सेंसरशिप के कारण लेख के अंत का वह हिस्सा काट दिया था, जिसमें मार्क्स की क्रांतिकारी कार्यनीति की व्याख्या थी। दुर्भाग्यवश मैं वह हिस्सा यहां दुबारा नहीं दे सकता, क्योंकि लेख की पहली प्रति मेरे कागजों में कहीं क्रैको या स्विटजरलैंड में रह गयी है। मुझे केवल इतना याद है कि लेख के इस अंतिम भाग में बाकी सब चीजों के साथ मैंने मार्क्स के एक पत्र में से *–जो उन्होंने एंगेल्स को 16 अप्रैल, 1856 को लिखा था–*एक उद्धरण दिया था, जिसमें उन्होंने कहा थाः 'किसी दूसरे किसान युद्ध द्वारा सर्वहारा क्रांति का समर्थन किये जाने की संभावना पर ही जर्मनी में सब कुछ निर्भर होगा। तब सब बात ठीक बैठेगी।' *यह बात हमारे मेन्शेविक, जो इस कदर गिर गये हैं कि समाजवाद के साथ गद्दारी पर उतर आये हैं और भाग कर बुर्जुआ वर्ग से जा मिले हैं, 1905 में भी नहीं समझ पाये और न उसके बाद ही।*' (*कार्ल मार्क्स*–मार्क्सवाद के ऐतिहासिक विकास की कुछ विशेषताएं, मास्को, 14 मई 1918, पृष्ठ 23, जोर हमारा)

यहां लेनिन स्पष्ट कह रहे हैं कि 16 अप्रैल 1856 वाले मार्क्स के पत्र में मार्क्स द्वारा निर्धारित की गई रणनीति/कार्यनीति के महत्व को मेंशेविक न तो 1905 में यानी क्रांति के जनवादी चरण में समझ पाये और न ही उसके बाद यानी क्रांति के समाजवादी चरण में। और यही बात ट्रॉट्स्की पर भी लागू होती है। मार्क्स के इस पत्र के रूसी क्रांति के जनवादी और समाजवादी चरणों में अलग–अलग महत्व की विशिष्टताओं को दर्शाते हुए 15 अप्रैल 1919 को लिखे अपने लेख '*तीसरा इंटरनेशनल और इतिहास में उसका स्थान*' में लेनिन लिखते हैंः

> "…Secondly, Russia's backwardness merged in a peculiar way the proletarian revolution against the bourgeoisie with the peasant revolution against the landowners. That is what we started from in October 1917, and we would not have achieved victory so easily then if we had not. As long ago as 1856, Marx spoke, in reference to Prussia, of the possibility of a peculiar combination of proletarian revolution and peasant war. From the beginning of 1905 the Bolsheviks advocated the idea of a revolutionary-democratic dictatorship of the proletariat and the peasantry. …" (On the International

Working – Class and Communist Movement, page No.274)

अर्थात्

"...दूसरे, रूस के पिछड़ेपन के कारण पूंजीपतियों के विरुद्ध सर्वहारा क्रांति और ज़मीदारों के विरुद्ध किसान क्रांति दोनों एक निराले ढंग से एक दूसरे में मिल गयीं। अक्तूबर, 1917 में हमने शुरुआत यहां से की थी और यदि हमने शुरुआत यहां से न की होती, तो हम इतनी आसानी से विजय प्राप्त न कर पाते। बहुत पहले 1856 में ही मार्क्स ने प्रशा के प्रसंग में सर्वहारा क्रांति तथा किसान युद्ध के एक अनोखे संयोजन की संभावना की बात कही थी। बोल्शेविकों ने 1905 के आरंभ से सर्वहारा वर्ग तथा किसानों के क्रांतिकारी–जनवादी अधिनायकत्व के विचार का प्रचार किया। ..., 1905 की क्रांति में मज़दूर तथा किसान जन साधारण की राजनीतिक शिक्षा के सिलसिले में बहुत योग दिया...1905 के 'आम पूर्वाभ्यास' के बिना 1917 की क्रांतियां–फ़रवरी की बुर्जुआ क्रांति और अक्तूबर की सर्वहारा क्रांति दोनों ही– असंभव हो जाती।" (तीसरा इंटरनेशनल और इतिहास में उसका स्थान– अंतर्राष्ट्रीय मज़दूर और कम्युनिस्ट आंदोलन, पृ. 309)

कितना स्पष्ट है कि मार्क्स के 16 अप्रैल 1856 में दी गई रणनीति यानी 'किसान युद्ध द्वारा समर्थित सर्वहारा क्रांति' की रणनीति क्रांति के जनवादी चरण में यदि अपने अंजाम तक पहुंचती है तो वह सर्वहारा वर्ग और किसान वर्ग के क्रांतिकारी जनवादी अधिनायकत्व का परिणाम पैदा करती, लेकिन रूसी फरवरी क्रांति में ऐसा नहीं हो पाया। समझौतावादी रूसी बुर्जुआ वर्ग सत्ता पर कब्जा करने में सफल हो गया जिसके कारण कृषि क्रांति अधूरी ही रह गयी। ऐसी परिस्थिति आ जाने के बाद लेनिन ने समाजवादी क्रांति का नारा दिया और कहा कि अब समाजवादी क्रांति अथवा समाजवादी अधिनायकत्व ही किसानों को ज़मीनें देगा। और किसानों ने अपने इसी हित के लिए अक्तूबर में समाजवादी अधिनायकत्व का समर्थन किया और साथ दिया लेकिन किसान वर्ग सामान्य रूप से अधिनायकत्व में हिस्सेदार नहीं था; दूसरे शब्दों में अक्तूबर क्रांति में आई सत्ता सर्वहारा वर्ग एवं किसान वर्ग का जनवादी अधिनायकत्व नहीं था बल्कि किसानों के निर्धनतम हिस्से द्वारा समर्थित सर्वहारा अधिनायकत्व था। 16 अप्रैल 1856 के पत्र में मार्क्स की रणनीति/कार्यनीति की इस प्रकार की जटिलता को लेनिन ही समझ पाये थे, ट्रॉट्स्की इस रणनीति को समझने में विफल ही नहीं रहे बल्कि इसे विफल बनाने की लासालवादी प्रस्थापना के आधार पर खुद अपने द्वारा गढ़े गए स्थायी क्रांति के 'हथियार' का भरपूर इस्तेमाल किया। आइए अब देखें कि लेनिन की मृत्यु के बाद ट्रॉट्स्की ने मार्क्स के उक्त पत्र का किस भांति अपने स्थायी क्रांति के सिद्धांत की पुष्टि के लिए दुरुपयोग किया।

ट्रॉटस्की द्वारा की गई मार्क्स के पत्र की व्याख्या:

ट्रॉट्स्की अपनी पुस्तक '*The Permanent Revolution*' (1928) में लिखते हैं:

a). "The proletariat took power together with the peasantry in October, says Lenin. By that alone, the revolution was a bourgeois revolution. Is that right? In a certain sense, yes. But this means that the *true* democratic dictatorship of the proletariat and the peasantry, that is, the one which actually destroyed the regime of autocracy and serfdom and snatched the land from the feudalists, was accomplished not *before* October but only *after* October; it was accomplished, to use Marx's words, in the form of the *dictatorship of the proletariat supported by the peasant war*—and then, a few months later began growing into a socialist dictatorship. Is *this* really hard to understand? Can differences of opinion prevail on this point *today*? (The Permanent Revolution, Chapter-5)

ट्रॉट्स्की कहते हैं कि

"लेनिन ने कहा कि अक्तूबर में सर्वहारा वर्ग ने किसान वर्ग के साथ मिलकर सत्ता हासिल की और बस इसी मायने में अक्तूबर क्रांति एक बुर्जुआ क्रांति थी। क्या यह सही है? एक मायने में, हां। लेकिन इसका अर्थ यह हुआ कि सर्वहारा वर्ग और किसान वर्ग का वास्तविक जनवादी अधिनायकत्व जिसने वास्तविक रूप में एकतांत्रिक शासन और भूदासता को नष्ट किया तथा सामंतों से जमीने छीनी, वह अक्तूबर से पहले नहीं बल्कि अक्तूबर के बाद सम्पन्न हुआ; यदि मार्क्स के शब्दों का प्रयोग करें तो यह कार्य किसान युद्ध द्वारा समर्थित सर्वहारा सत्ता के रूप में सम्पन्न हुआ– और फिर जो सत्ता, कुछ महीनों के बाद समाजवादी अधिनायकत्व में विकसित होनी शुरु हुई। क्या इसे समझना सचमुच ही बहुत कठिन है? क्या इस बिन्दु पर आज भी मतभेद विद्यमान रह सकते है?"

यह तो सही है कि लेनिन ने अक्तूबर समाजवादी क्रांति की सफलता के बारे में कहा था कि अक्तूबर में सत्ता समस्त किसानों के सहयोग से प्राप्त हुई थी। लेकिन इसका यह अर्थ निकाल लेना जैसा कि ट्रॉट्स्की निकाल रहे हैं कि अक्तूबर क्रांति के जरिए वास्तव में सर्वहारा वर्ग और किसान वर्ग का जनवादी अधिनायकत्व ही अस्तित्व में आया था, बिल्कुल गलत है; और फिर आगे बढ़कर यह कहना कि यह अधिनायकत्व मार्क्स के शब्दों में किसान युद्ध द्वारा समर्थित सर्वहारा वर्ग का एकल अधिनायकत्व ही था, एक और तिकड़मबाजी है। और ट्रॉट्स्की द्वारा फिर आगे इस कथित सर्वहारा वर्ग एवं किसान वर्ग के जनवादी अधिनायकत्व को कुछ महीनों बाद समाजवादी अधिनायकत्व में विकसित होते हुए देखना अपने स्थायी क्रांति के सिद्धांत को सिद्ध कर देने के कुप्रयास के अलावा और कुछ नहीं है। हमने पहली किश्तों में अनेक उद्धरण दिए हैं जिसमें लेनिन ने अक्तूबर क्रांति को आरंभ से ही सर्वहारा अधिनायकत्व अथवा समाजवादी अधिनायकत्व वाली समाजवादी क्रांति कहा है। अक्तूबर क्रांति के जरिए अस्तित्व में आया अधिनायकत्व सर्वहारा वर्ग और समस्त किसानों का जनवादी अधिनायकत्व नहीं बल्कि किसानों के निर्धनतम हिस्से द्वारा समर्थित सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व था। साथी त्यागी एक सवाल बार–बार उठाते हैं कि जब निर्धन किसानों द्वारा समर्थित सर्वहारा वर्ग का एकल अधिनायकत्व संभव है तो फिर समस्त किसानों द्वारा समर्थित सर्वहारा वर्ग का एकल अधिनायकत्व क्यों नहीं हो सकता? कितनी हैरानी की बात है कि त्यागी जी इतनी छोटी सी बात को भी नहीं समझते कि किसानों के निर्धनतम हिस्से को लेनिन ने अर्ध–सर्वहारा की श्रेणी में रखा है जिसका भविष्य

समाजवाद के साथ जुड़ा होता है और सर्वहारा अधिनायकत्व से जिसके हितों का कोई टकराव नहीं होता। *दूर देश से लिखे लेनिन के पहले पत्र* के यदि अंतिम दो पृष्ठों को पढ़ लें तो समझ में आ जाएगा कि लेनिन ने अर्द्धसर्वहारा और निर्धन किसानों को सर्वहारा वर्ग के पहले अभिन्न मित्र के रूप में दर्शाया है और दूसरे अभिन्न मित्र के रूप में सभी देशों के सर्वहारा वर्ग को। जबकि समस्त किसानों का (जिसमें धनी किसान भी शामिल होते हैं) भविष्य समाजवाद के साथ जुड़ा हुआ नहीं होता है बल्कि धनी किसान सर्वहारा अधिनायकत्व के विरोध में खड़े हो जाते हैं और वे अपना भविष्य पूंजीवादी व्यवस्था को बनाये रखने में ही देखते हैं।

b). ट्रॉट्स्की ने मार्क्स के 16 अप्रैल 1856 के पत्र और मार्क्स–एंगेल्स के केन्द्रीय समिति के नाम 1850 वाले संदेश के सारतत्वों पर कुल्हाड़ा चलाकर ऐसा मिश्रण तैयार किया कि मार्क्सवाद लासालवाद बन जाए

ऊपर बिन्दु तीन में हमने मार्क्स–एंगेल्स और लेनिन के स्थायी क्रांति के मौलिक सिद्धांत पर चर्चा की। 1848 की जर्मन बुर्जुआ–जनवादी क्रांति के साथ जर्मन बुर्जुआ वर्ग द्वारा विश्वासघात किये जाने के बाद मार्क्स ने सर्वहारा वर्ग और निम्न–पूंजीवादी (मुख्यतः किसान) वर्ग के संश्रय के आधार पर क्रांतिकारी जनवादी अधिनायकत्व के रास्ते जनवादी क्रांति को सम्पन्न किये जाने की राह दिखायी थी, जिसे लेनिन ने 1905 में लिखी अपनी रचना 'दो कार्यनीतियां' का आधार बनाया था। इसी संश्रय के रास्ते मार्क्स–एंगेल्स ने 1850 में केन्द्रीय समिति के नाम संदेश में सर्वहारा वर्ग को स्थायी क्रांति का रास्ता भी दिखाया था, जिसकी चर्चा भी ऊपर बिन्दु तीन में की गई है। ट्रॉट्स्की ने 1850 के मार्क्स–एंगेल्स के संदेश में वे अवधारणाएं घुसेड़ दीं जिनका उस संदेश में कोई स्थान नहीं है और फिर 1850 के संदेश में जबरदस्ती प्रवेश करा दी गयी अपनी मनमानी अवधारणाओं के साथ ट्रॉट्स्की ने मार्क्स के उक्त 16 अप्रैल 1856 के पत्र की लासालवादी ढंग से व्याख्या करके दोनों का एक ऐसा मिश्रण तैयार कर दिया जो मार्क्सवाद न रहकर पूरी तरह लासालवाद बन गया। पहली मनमानी अवधारणा तो 1850 के संदेश में ट्रॉट्स्की ने जबरदस्ती यह ठूंस दी कि मार्क्स–एंगेल्स अपने उस संदेश में निम्न–पूंजीवादी जनवाद की जगह शहरी जनवाद (अर्बन डैमोक्रेसी) की बात करते हैं। दूसरी मनमानी अवधारणा यह प्रवेश करा दी कि मार्क्स–एंगेल्स उस कथित शहरी जनवाद की मंजिल को हासिल करने के लिए शहरी निम्न–पूंजीवादी क्रांतिकारी तत्वों के नेतृत्व में किसान वर्ग की शक्ति की बात कह रहे हैं। असल बात यह है कि मार्क्स–एंगेल्स अपने उस संदेश में न तो किसी शहरी जनवाद की बात करते हैं और न ही उस शहरी जनवाद की प्राप्ति के लिए शहरी निम्न–पूंजीवादी क्रांतिकारी तत्वों द्वारा किसानों के नेतृत्व की। और तीसरी अपनी मनमानी बात ट्रॉट्स्की ने फिर यह गढ़ी कि मार्क्स ने शहरी निम्न–पूंजीवादी क्रांतिकारी तत्वों द्वारा किसानों के नेतृत्व के जरिये शहरी जनवाद की प्राप्ति की रणनीति को भी (जो रणनीति कभी थी ही नहीं) 16 अप्रैल 1856 के पत्र के जरिये तिलांजलि दे दी! अपने मतलब से ट्रॉट्स्की द्वारा गढ़ी गई इन्हीं सब बेतुकी, मनमानी और निराधार बातों को दर्शाने के लिए हम ट्रॉट्स्की की 1928 की पुस्तक 'द परमानेंट रिवोल्यूशन' से एक उद्धरण देंगे और उस उद्धरण की सिलसिलेवार व्याख्या करेंगे। उद्धरण निम्न प्रकार से है:

> "But Radek does not even take up the position of Marx seriously, but only casually, episodically, confining himself to the circular of 1850, *in which Marx still considered the peasantry the natural ally of the petty-bourgeois urban democracy*. Marx at that time expected an independent stage of democratic revolution in Germany, that is, a temporary assumption of power by the urban petty-bourgeois radicals, supported by the peasantry. There is the nub of the question! That, however, is just what did not happen. And not by chance, either. Already in the middle of the last century, the petty-bourgeois democracy showed itself to be powerless to carry out its own independent revolution. And Marx took account of this lesson. On April 16, 1856—that is six years after the circular mentioned—Marx wrote to Engels: 'The whole thing in Germany will depend on the possibility of covering the rear of the proletarian revolution by a second edition of the Peasants' War. Then the affair will be splendid.' These remarkable words, completely forgotten by Radek, constitute a truly precious key to the October Revolution as well as to the whole problem that occupies us here, in its entirety. Did Marx skip over the agrarian Revolution?" (The Permanent Revolution, Chapter-7)

ट्रॉट्स्की रादेक की आलोचना के माध्यम से मार्क्स पर निशाना साधते हुए लिखते हैं:

> "But Radek does not even take up the position of Marx seriously, but only casually, episodically, confining himself to the circular of 1850, *in which Marx still considered the peasantry the natural ally of the petty-bourgeois urban democracy*." (The Permanent Revolution, Chapter-7)

अर्थात् ट्रॉट्स्की कहते हैं कि रादेक मार्क्स की अवस्थिति को गंभीरता से न लेकर लापरवाही और सांयोगिक ढंग से लेते हैं तथा अपने आप को मार्क्स के 1850 के संदेश तक सीमित रखते हैं, जिसमें कि मार्क्स अभी भी किसान वर्ग को निम्न–पूंजीवादी शहरी जनवाद का स्वाभाविक मित्र मानते थे।

ट्रॉट्स्की द्वारा यह मार्क्स और मार्क्सवाद से कितना खतरनाक खिलवाड़ है! पहली खतरनाक बात तो ट्रॉट्स्की द्वारा यह कहना है कि 1850 के संदेश (कम्युनिस्ट लीग के नाम केन्द्रीय समिति का संदेश) में भी मार्क्स किसान वर्ग को निम्न–पूंजीवादी शहरी जनवाद (urban democracy) का स्वाभाविक मित्र मानते थे! मार्क्स के 1850 के संदेश में मनमाने ढंग से ट्रॉट्स्की द्वारा शहरी जनवाद (urban democracy) के वाक्यांश को घुसेड़ दिया जाना उनके निकृष्ट इरादों को जाहिर कर देता है क्योंकि 1850 के संदेश में शहरी जनवाद (urban democracy) जैसी अवधारणा का कोई उल्लेख ही नहीं है। वहां केवल निम्न–पूंजीवादी जनवाद और निम्न–पूंजीवादी जनवादी पार्टी आदि का ही उल्लेख है, शहरी

जनवाद का नहीं। निम्न–पूंजीवाद की जगह 'शहरी जनवाद' लिखने में ट्रॉट्स्की का कुत्सित इरादा यह है कि क्रांतिकारी जनवादी अधिनायकत्व के लिए सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में किसान वर्ग का संश्रय न दिखाकर शहरी निम्न पूंजीपति वर्ग के क्रांतिकारी तत्वों के नेतृत्व में किसान वर्ग का संश्रय दिखा दिया जाए और फिर इस संश्रय को मार्क्स द्वारा परित्याग किया हुआ दिखा दिया जाए, जोकि मार्क्सवाद के साथ एक घृणित अपराध है। देखिए, ट्रॉट्स्की आगे इसी बात को लिखते हैं:

> "Marx at that time expected an independent stage of democratic revolution in Germany, that is, a temporary assumption of power by the urban petty-bourgeois radicals, supported by the peasantry. There is the nub of the question! That, however, is just what did not happen. And not by chance, either." (Ibid)

अर्थात् मार्क्स को उस वक्त उम्मीद थी कि जर्मनी में किसान वर्ग द्वारा समर्थित शहरी निम्न–पूंजीवादी क्रांतिकारी तत्वों के नेतृत्व में स्वतंत्र रूप से अल्पकालिक तौर पर सत्ता ग्रहण के लिए एक स्वतंत्र जनवादी क्रांति का चरण विद्यमान है। यही सवाल का सारतत्व है! परंतु ऐसा कुछ भी घटित नहीं हुआ और यह भी नहीं कि ऐसा संयोगवश नहीं हुआ।

अब देखिए ट्रॉट्स्की ने पहले तो मनमाने ढंग से शहरी जनवाद की अवधारणा का मार्क्स के 1850 के संदेश में प्रवेश कराया फिर उसके मुताबिक मार्क्स की उम्मीद और अपेक्षा के नाम पर शहरी निम्न–पूंजीवादी तत्वों के नेतृत्व में किसान वर्ग के साथ अल्पकालिक तौर पर सत्ता ग्रहण करने और स्वतंत्र जनवादी क्रांति के चरण संबंधी मनगढंत कहानी रच दी, जिसका कि मार्क्स–एंगेल्स द्वारा जारी किए गए 1850 के संदेश में कोई जिक्र तक नहीं है। अब और देखें ट्रॉट्स्की आगे और क्या कहानी गढ़ते हैं, वह लिखते हैं:

> "Already in the middle of the last century, the petty-bourgeois democracy showed itself to be powerless to carry out its own independent revolution." (Ibid)

अर्थात् गत शताब्दी के मध्य में ही, निम्न–पूंजीवादी जनवाद ने खुद को स्वतंत्र रूप से अपनी निम्न–पूंजीवादी क्रांति को अंजाम देने में असमर्थ पाया।

अब देखें ट्रॉट्स्की की तिकड़मों की श्रृंखला। पहले तो शहरी जनवाद की तिकड़म रची, फिर उसे किसान वर्ग के समर्थन से शहरी निम्न–पूंजीवादी तत्वों के नेतृत्व में अंजाम देने की तिकड़म रची और इस तिकड़म को मार्क्स की उम्मीद के रूप में प्रस्तुत कर दिया और फिर कह दिया कि इस प्रकार का निम्न–पूंजीवादी जनवाद पिछली शताब्दी के मध्य तक ही समझ गया कि ऐसी क्रांति करने की उसमें कोई सामर्थ्य ही नहीं है। और फिर आगे एक और तिकड़म लेकर आते हैं और लिखते हैं:

> "And Marx took account of this lesson. On April 16, 1856—that is six years after the circular mentioned—Marx wrote to Engels: 'The whole thing in Germany will depend on the possibility of covering the rear of the proletarian revolution by a second edition of the Peasants' War. Then the affair will be splendid.' These remarkable words, completely forgotten by Radek, constitute a truly precious key to the October Revolution as well as to the whole problem that occupies us here, in its entirety. Did Marx skip over the agrarian Revolution?" (Ibid)

अर्थात् मार्क्स ने इस सबक पर विचार किया। 16 अप्रैल 1856 को यानी उक्त संदेश के छह साल बाद मार्क्स ने एंगेल्स को लिखा: 'किसान युद्ध के किसी दूसरे संस्करण द्वारा सर्वहारा क्रांति का समर्थन किये जाने की संभावना पर ही जर्मनी में सब कुछ निर्भर होगा। तब सब बात ठीक बैठेगी।' रादेक मार्क्स के इन उल्लेखनीय शब्दों को पूर्णतः भूल गये, जो शब्द वास्तव में अक्तूबर क्रांति और उस संपूर्ण गुत्थी को जिससे कि हमारा वास्ता पड़ा हुआ है उसकी पूर्णता में समझने के लिए एक मूल्यावान कुंजी का निर्माण करते हैं।"

तिकड़म पर तिकड़म और तिकड़म पर फिर तिकड़म! पहले तो ट्रॉट्स्की शहरी निम्न–पूंजीवादी जनवादी क्रांतिकारी तत्वों की अगुआई में किसानों के साथ मिलकर जनवादी क्रांति की तिकड़म रचते रहे और इस तिकड़म को मार्क्स के मत्थे मढ़ते हैं और फिर मार्क्स द्वारा इससे सबक लिये जाने और उस पर विचार किये जाने की तिकड़म रचते हैं और फिर मार्क्स द्वारा एंगेल्स को लिखे 16 अप्रैल 1856 के पत्र के 'सदुपयोग' की तिकड़म रचते हैं और उस पत्र की अन्तर्वस्तु को लासालवाद और अपनी स्थायी क्रांति की अवधारणा के रंग में रंग देते हैं एवं मार्क्स के पत्र की अन्तर्वस्तु जिसकी व्याख्या एंगेल्स और लेनिन ने एक क्रांतिकारी जनवादी अधिनायकत्व के रूप में की है उनके उलट जाकर किसान वर्ग द्वारा समर्थित सर्वहारा वर्ग के एकल अधिनायकत्व का निष्कर्ष प्रस्तुत कर देते हैं। सबसे बड़ी हैरानी की बात यह कि ट्रॉट्स्की मार्क्स के उक्त पत्र के यानी अप्रैल 1856 के पत्र के 'उल्लेखनीय शब्दों' को अक्तूबर क्रांति तक की सारी गुत्थी को सुलझाने की कुंजी घोषित करते हैं और इस कुंजी को अपनी स्थायी क्रांति के सिद्धांत की पुष्टि बताते हैं। हैरानी की बात इसलिए कि यदि ट्रॉट्स्की के स्थायी क्रांति का सिद्धांत वही है जो मार्क्स के 1856 के पत्र के 'उल्लेखनीय शब्द' हैं तो फिर इन 'उल्लेखनीय शब्दों' की स्थायी क्रांति के नाम से पूंजीवाद के साम्राज्यवादी युग में ट्रॉट्स्की द्वारा पुनः ईज़ाद करने की क्या जरूरत आन पड़ी थी? सबसे गंभीर प्रश्न यह भी है कि जो व्यक्ति मार्क्सवाद के आधारभूत सिद्धांतों और प्रस्थापनाओं के साथ इस कदर मनमानी छेड़छाड़ और तोड़–मरोड़ करता है जैसा कि ट्रॉट्स्की कर रहे हैं तो क्या ऐसे व्यक्ति कम्युनिस्ट माना जाए?

5.

मार्क्सवाद के सैद्धांतिक आधारों तथा मौलिक प्रस्थापनाओं की रक्षा करें – लेनिन

साथी राजेश त्यागी हमें 'एक बुनियादी चीज़' समझाते हुए लिखते हैं:

> "दोस्तो, हमें एक बुनियादी चीज़ समझनी होगी। मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन, ट्रॉटस्की, रोज़ा, ग्राम्सी सब हम–आप जैसे ही हाड़–मांस के लोग हैं। उन सभी ने अगणित गलतियां कीं– सिद्धांत और व्यवहार दोनों में। उनकी महानता इस चीज़ में नहीं है कि वे हमेशा सही थे (जो कोई भी नहीं हो सकता) बल्कि इसमें है कि उन्होंने दूसरों की और अपनी गलतियों से सबक लिए, उन्हें दुरुस्त किया। इसलिए, उन्हें समझने के लिए, उन्हें उनके अधिक परिपक्व लेखन से पढ़ना शुरू करें। मसलन, लेनिन को समझने के लिए 1924 से 1905 की ओर चलें जिससे लेनिन की गलतियां भी सामने आती जाएंगी। जो

> लेनिन को 1889 से 1924 की ओर पढ़ेंगे, वे लेनिन के नाम पर सिर्फ रामायण बांचेंगे!"

साथी राजेश त्यागी ने मार्क्स–एंगेल्स–लेनिन, रोज़ा, ग्राम्सी की श्रेणी में ट्रॉट्स्की को तो रख दिया लेकिन लासाल को रखना भूल गए जो ट्रॉट्स्की के सैद्धांतिक मार्गदर्शक रहे हैं। और दूसरी बात यह कि मार्क्स–एंगेल्स–लेनिन को त्यागी जी ने 'हम–आप जैसे' हाड–मांस से बने लोग मात्र बता दिया जिन्होंने सिद्धांत और व्यवहार में अगणित गलतियां कीं, आदि–आदि। विश्व सर्वहारा के महान् शिक्षकों को ऐसे नजरिए से देखना ट्रॉट्स्कीवादियों के लिए अत्यंत अनिवार्य है क्योंकि मजदूर वर्ग का इस प्रकार का मानसिक ढांचा बनाये बिना वे ट्रॉट्स्कीवाद को मजदूर वर्ग में ले जा ही नहीं सकते। उनके लिए ट्रॉट्स्कीवाद के झंडे को ऊंचा उठाये रखने के लिए मार्क्सवाद–लेनिनवाद के झंडे को एक साधारण झंडे के रूप में दिखाना जरूरी है। इन्होंने अपने कंधों पर ट्रॉट्स्कीवाद को ढोने की जिम्मेदारी ली है जिसके लिए मार्क्सवाद–लेनिनवाद के मूलभूत सिद्धांतों और प्रस्थापनाओं को पैरों तले रौंदकर चलना जरूरी है। लेनिन ने तो कहा है जैसा कि ऊपर शीर्षक में लिखा गया है कि मार्क्सवाद के सैद्धांतिक आधारों तथा मौलिक प्रस्थापनाओं की रक्षा सभी मार्क्सवादियों की प्रथम जिम्मेदारी है लेकिन ट्रॉट्स्कीवादी तो इस बात से ही इनकार करके चलते हैं कि मार्क्सवाद के कोई ऐसे सैद्धांतिक आधार और प्रस्थापनाएं हो भी सकती हैं जिन पर वे अपनी आलोचना का कुल्हाड़ा न चला सकें! जो मार्क्सवादी मार्क्सवाद–लेनिनवाद के आधारभूत सिद्धांतों तथा मौलिक प्रस्थापनाओं पर जोर देते हैं उन्हें ट्रॉट्स्कीवादी मार्क्सवाद के गीतापाठियों और रामायणबांचुओं की संज्ञा देते हैं। ट्रॉट्स्कीवादियों के अनुसार मार्क्सवाद–लेनिनवाद के ऐसे कोई मूलभूत सिद्धांत नहीं हैं जिनकी हिफ़ाजत की जाये। लेकिन लेनिन मार्क्सवाद की हिफ़ाजत करना सभी मार्क्सवादियों का परम कर्त्तव्य और जिम्मेदारी बताते हुए अपने सुप्रसिद्ध निबंध *मार्क्सवाद के ऐतिहासिक विकास की कुछ विशेषताएं* में लिखते हैं:

> "...इससे बढ़कर कोई और ज़रूरी काम नहीं है कि उन सभी मार्क्सवादियों को इकट्ठा किया जाए, जोकि मार्क्सवाद के संकट की गइराई को और उसका सामना करने की ज़रूरत को महसूस करते हैं, ताकि मार्क्सवाद के सैद्धांतिक आधारों तथा मौलिक प्रस्थापनाओं की रक्षा की जा सके जिन्हें मार्क्सवाद के विभिन्न 'सहयात्रियों' में बुर्जुआ प्रभाव के फैल जाने की मदद से परस्पर विरोधी पक्षों द्वारा विकृत किया जा रहा है।" (संकलित रचनाएं दस खंडों में, खंड–4, पृष्ठ 130)

क्या ट्रॉट्स्कीवादी हमें मार्क्सवाद के उन सैद्धांतिक आधारों तथा मौलिक प्रस्थापनाओं के बारे कुछ बताएंगे कि वे कौन–कौन से मूल सिद्धांत और प्रस्थापनाएं हैं? मार्क्सवाद के ऐसे आधारभूत सिद्धांतों और मौलिक प्रस्थापनाओं का नाम ही ट्रॉट्स्कीवादी गीतापाठ, कुरान की आयतें और रामायण के श्लोक बताते हैं। लेकिन लेनिन ने अपने निबंध *'मार्क्सवाद के तीन स्रोत तथा तीन संघटक अंग'* में लिखा है:

> "मार्क्स तथा एंगेल्स ने अत्यंत दृढ़तापूर्वक भौतिकवादी दर्शन की हिमायत की और बार–बार इस बात को समझाया कि *इस आधार से किसी भी प्रकार का विचलन कितनी भारी भूल है*। उनके विचारों की अत्यंत सुस्पष्ट तथा पूर्ण व्याख्या एंगेल्स की *'लुडविग फायरबाख' तथा 'ड्यूहरिंग मत–खंडन'* नामक रचनाओं में की गयी है, *जो 'कम्युनिस्ट पार्टी के घोषणापत्र' की तरह ही हर वर्ग–चेतन मजदूर के लिए मार्क्सवाद के गुटके हैं।*" (मार्क्स–एंगेल्स मार्क्सवाद, पृष्ठ 54)

लेकिन ट्रॉट्स्कीवादियों को तो *'मार्क्सवाद के गुटके'* वाक्यांश से ही परम वैर है। वे न तो 'कम्युनिस्ट पार्टी के घोषणापत्र' को *'मार्क्सवाद का गुटका'* मानने के लिए तैयार है और न ही एंगेल्स की रचना 'लुडविग फायरबाख तथा 'ड्यूहरिंग–मत–खंडन' को। ट्रॉट्स्कीवादी इनमें वर्णित मूलभूत सिद्धांतों को उद्धृत करने वालों को गीतापाठी बताते हैं। असल बात यह है कि ट्रॉट्स्की और उनके शिष्य लासालवादी हैं। लासाल की 1848 की मार्क्सवाद विरोधी प्रस्थापना को वे ट्रॉट्स्की द्वारा 'खोजा गया' साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रांति के युग का मार्क्सवाद मानते हैं जिसके जरिए वे मार्क्सवाद–लेनिनवाद के तमाम मूलभूत सिद्धांतों को पुराने पड़ गये सिद्धांत बताकर उन पर निर्ममता से ट्रॉट्स्कीवादी कैंची चलाते हैं। लेनिन ने मार्क्सवादी दर्शन की फौलाद के एक ही टुकड़े से तुलना की है और लिखा है:

> "…From this Marxist philosophy, which is cast from a single piece of steel, you cannot eliminate one basic premise, one essential part, without departing from objective truth, without falling a prey to bourgeois-reactionary falsehood." (Materialism and Empirio-criticism, page 314)

अर्थात्

> "...इस मार्क्सवादी दर्शन से, जो फ़ौलाद के एक ही टुकड़े से बनाया गया है, वस्तुगत सत्य से हटे बिना, किसी पूंजीवादी प्रतिक्रियावादी झूठ का शिकार हुए बिना आप एक भी बुनियादी मान्यता को, एक भी अनिवार्य अंश को नहीं निकाल सकते।" (अनुवादक नरेश नदीम)

लेकिन ट्रॉट्स्कीवादी मार्क्सवाद–लेनिनवाद की तमाम बुनियादी प्रस्थापनाओं को 'स्टालिनवाद' का नाम देकर उनकी खिल्ली उड़ाते हैं, कारण यह कि वे मार्क्सवादी–लेनिनवादी नहीं बल्कि लासालवादी हैं और बड़ी चालाकी से तथा मार्क्सवादी लफ़्फ़ाज़ी से मार्क्सवाद–लेनिनवाद को ही लासालवाद से विस्थापित करना चाहते हैं। वे मज़दूर वर्ग के भीतर मार्क्सवाद की चादर ओढे छुपे लासालवादी हैं। लासाल के प्रति मार्क्स का क्या रुख था इसे जानने के लिए ट्रॉट्स्कीवादी लुडविग कुगलेमान को लिखा 23 फरवरी 1865 का मार्क्स का पत्र पढ़ लें और लासालवादी प्रस्थापनाओं की मार्क्स ने कैसे धज्जियां उड़ाई हैं, इसे जानने के लिए मार्क्स की रचना *'गोथा कार्यक्रम की आलोचना'* पढ़ लें ।

6.

1947 के सत्ता हस्तांतरण पर त्यागी जी का संघी–प्रलाप

त्यागी जी 15 नवम्बर 2021 को अपनी पोस्ट में लिखते हैं

> "...कांग्रेसियों की भाषा बोलना बंद करो और स्पष्ट कहो कि 1947 को आजादी मानते हो या ब्रिटिश–भारतीय पूंजीपतियों के बीच सम्पन्न घृणित समझौता? इसे क्रांति मानते हो या प्रतिक्रांति का चरम? कांग्रेस के टहलुओं! फर्जीवामियों!! जो तुम कभी बोलने की हिम्मत नहीं कर सके, वह कंगना रणौत ने बोला। 1947 को लेकर कांग्रेसी झक्क बंद करो और कान खोलकर सुनो– 47 में ब्रिटिश और भारतीय पूंजीपतियों के बीच शर्मनाक समझौता हुआ था जिसने

> सांप्रदायिक दंगों की भयानकता को हथियार बनाकर, क्रांतिकारी लहर का गला घोंट दिया था। संघर्ष और बलिदानों की महान परंपरा को 1947 में क्रांति के गर्भपात से मत जोड़ो। 1947, इन संघर्षों, बलिदानों का परिणाम नहीं था बल्कि उनकी हत्या करके, उनकी मृत–देह पर पैर रखकर सामने आया था। 1947, हमारे समूचे उपनिवेशवाद विरोधी संघर्ष और उसके महानतम आदर्शों का नकार है।"

ऐतिहासिक द्वन्द्ववाद का ज्ञान सिफ़र होने की वजह से साथी त्यागी सवाल उठाते हैं कि "...स्पष्ट कहो कि 1947 को आजादी मानते हो या ब्रिटिश–भारतीय पूंजीपतियों के बीच सम्पन्न घृणित समझौता? इसे क्रांति मानते हो या प्रतिक्रांति का चरम?" उनके द्वारा उठाये गये इस सवाल से स्पष्ट जाहिर होता है कि त्यागी जी समाज में वर्गों की मार्क्सवादी–लेनिनवादी समझ से अनभिज्ञ हैं और इसलिए वर्ग संघर्ष के चरित्र और उसकी मंजिल से भी। वे जब ब्रिटिश–भारतीय पूंजीपतियों के बीच सम्पन्न घृणित समझौते की बात कहते हैं तो वे भूल जाते हैं कि ब्रिटिश पूंजीपति और भारतीय पूंजीपति वर्ग एक वर्ग न होकर शासक और शासित वर्ग थे। सन् 1947 का घृणित समझौता शासक पूंजीपति वर्ग यानी साम्राज्यवादी वर्ग और शासित पूंजीपति वर्ग के बीच था। ब्रिटिश शासक वर्ग के अधीन भारतीय समाज का जो अंतर्विरोध था 1947 के घृणित समझौते के साथ ही वह अंतर्विरोध गुणात्मक रूप से एक दूसरे अंतर्विरोध में रूपांतरित हो गया था। समझौते के बाद भारतीय सर्वहारा वर्ग का मुख्य अंतर्विरोध भारतीय पूंजीपति वर्ग के विरुद्ध हो गया था और वर्ग संघर्ष की मंजिल भी पूंजी और श्रम के बीच की मंजिल बन गई थी। क्योंकि भारत में द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद और मार्क्सवाद–लेनिनवाद के सिद्धांतों से लैस कोई कम्युनिस्ट पार्टी विद्यमान नहीं थी इसीलिए 1947 का घृणित समझौता हो सका नहीं तो सर्वहारा वर्ग और किसान वर्ग के क्रांतिकारी जनवादी अधिनायकत्व के जरिये ब्रिटिश सत्ता को उखाड़ फेंका जाता और भारत में मज़दूरों–किसानों का एक क्रांतिकारी जनवादी अधिनायकत्व स्थापित होता। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि विदेशी पूंजीपति वर्ग के उत्पीड़न और शासन के स्थान पर समझौते के जरिये भारतीय पूंजीपति वर्ग का उत्पीड़न और शासन स्थापित हुआ तो यह समाज व्यवस्था में कोई गुणात्मक परिवर्तन नहीं था। रूस में तो फरवरी क्रांति के जरिये मज़दूरों और किसानों की ताकत के द्वारा ही जारशाही का तख्ता उखाड़ फेंका गया था लेकिन इसके बावजूद समझौतावादी रूसी पूंजीपति वर्ग सत्ता पर काबिज हो गया था तो लेनिन ने कहा था कि "सत्ता का एक वर्ग के हाथों से दूसरे वर्ग के हाथों में जाना क्रांति का प्रथम और बुनियाद लक्षण है"। भारत में सत्ता एक वर्ग के हाथों से दूसरे वर्ग के हाथों में क्रांतिकारी कार्यवाही के जरिये न होकर भारत के शासित पूंजीपति वर्ग और ब्रिटिश साम्राज्यवादी शासक वर्ग के बीच एक समझौते के जरिये हस्तांतरित हुई तो सत्ता के इस हस्तांतरण का परिणाम भी समाज व्यवस्था में गुणात्मक परिवर्तन है क्योंकि एक वर्ग के शासन की जगह दूसरे वर्ग के शासन ने ली है और द्वन्द्ववाद इस प्रकार के हस्तांतरण को भी गुणात्मक परिवर्तन के तौर पर मान्यता देता है, पर क्या किया जाए क्योंकि ट्रॉट्स्की और उनके सभी शिष्य लासालवाद के अनुयायी है जिन्होंने 1848 में ही द्वन्द्ववाद को ताक पर रखते हुए क्रांति के दो चरणों वाले सिद्धांत को लात मार दी थी और प्रस्थापना दी थी कि क्रांति का जनवादी राजनैतिक चरण भी अब से आगे सर्वहारा वर्ग के एकल अधिनायकत्व के रूप में सम्पन्न होगा। इसलिए यदि जनवादी क्रांति के चरण में समझौतावादी पूंजीपति वर्ग सत्ता हथिया ले जाये तो ट्रॉट्स्कीवादी उसे प्रतिक्रांति की संज्ञा देते हैं। उन्हें यह बात बिल्कुल समझ नहीं आती कि राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन का संघर्ष ही विदेशी साम्राज्यवादी शासन के विरुद्ध होता है। यह संघर्ष उत्पीड़ित राष्ट्र का उत्पीड़क राष्ट्र के विरुद्ध होता है। और यदि विशिष्ट आंतरिक और बाह्य परिस्थितियों के दबाव में आकर उत्पीड़क राष्ट्र का साम्राज्यवादी पूंजीपति वर्ग उत्पीड़ित राष्ट्र के पूंजीपति वर्ग को समझौते के द्वारा अपनी सत्ता उसे हस्तांतरित कर दे तो इसका परिणाम भी उत्पीड़क राष्ट्र और उत्पीड़ित राष्ट्र के बीच चले आ रहे संघर्ष का अंत होना होता है। जो घृणित समझौता 1947 में शासक ब्रिटिश पूंजीपति वर्ग और शासित भारतीय पूंजीपति वर्ग के बीच हुआ उसके फलस्वरूप भी भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के चरण का अंत हो गया और सर्वहारा का राजनैतिक–संघर्ष अगली मंजिल में प्रवेश कर गया यानी सीधा–सीधी भारतीय शासक पूंजीपति वर्ग के शासन के विरुद्ध समाजवाद के लिए संघर्ष हो गया। लेकिन जिनकी आंखों पर लासालवादी– ट्रॉट्स्कीवादी पर्दा पड़ा हुआ है वे वर्ग–संघर्ष और ऐतिहासिक द्वन्द्ववाद की इन बातों को नहीं समझ सकते। वे इस बात को नहीं समझ सकते कि विदेशी उत्पीड़न से मुक्ति पाये बिना सर्वहारा वर्ग का समाजवाद के लिए संघर्ष आरंभ हो ही नहीं सकता। इस संबंध में लेनिन लिखते हैं:

> "1789–1871 का युग गहरी छापें और क्रांतिकारी यादें छोड़ गया। सामंतवाद, निरंकुशतावाद तथा *विदेशी उत्पीड़न का तख्ता उलटे जाने से पहले* समाजवाद के लिए सर्वहारा वर्ग के संघर्ष के विकास का सवाल ही नहीं उठ सकता था।" (एशिया का जागरण, पृष्ठ 36, जोर हमारा)

यहां सवाल उठाया जा सकता है कि लेनिन ने विदेशी उत्पीड़न का तख्ता उलटने की बात कही है न कि किसी समझौते के द्वारा उत्पीड़ित राष्ट्र के पूंजीपति वर्ग को सत्ता हस्तांतरण की। जहां तक सर्वहारा वर्ग का राजनैतिक वर्ग–संघर्ष एक मंजिल आगे जाने का सवाल है तो इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि उत्पीड़ित राष्ट्र के पूंजीपति वर्ग ने उत्पीड़क राष्ट्र के शासक पूंजीपति वर्ग का तख्ता उलटने के जरिये सत्ता हासिल की है या किसी समझौते के जरिये। क्योंकि उत्पीड़क राष्ट्र के सामने भी और उत्पीड़ित राष्ट्र के पूंजीपति वर्ग के सामने भी उत्पीड़ित राष्ट्र के सर्वहारा वर्ग और किसानों की शक्ति का भय बना रहता है और उत्पीड़क राष्ट्र का पूंजीपति वर्ग भी इसके चलते गनीमत इसी में समझता है कि उत्पीड़ित राष्ट्र के पूंजीपति वर्ग को सत्ता का हस्तांतरण शांतिपूर्ण ढंग से करने में ही दोनों देशों के पूंजीपति वर्गों की भलाई है। आधुनिक द्वन्द्ववाद के जन्मदाता हेगेल के द्वन्द्ववाद की चर्चा करते हुए एंगेल्स ने अपनी प्रसिद्ध रचना 'लुडविग फायरबाख' में समझौते के जरिये इस प्रकार के सत्ता हस्तांतरण के बारे में लिखा है:

> "...रोमन जनतंत्र यथार्थ था, पर उसे हटाकर उसकी जगह लेने वाला रोमन साम्राज्य भी यथार्थ था। 1789 में फ्रांसीसी राजतंत्र इतना अथार्थ बन गया था, यानी सारी आवश्यकता से इस कदर वंचित हो चुका था, इस कदर अबुद्धिसंगत हो चुका था कि उसे महान् क्रांति द्वारा, जिसका हेगेल ने सदा अत्यंत उत्साह से उल्लेख किया है, नष्ट हो जाना पड़ा। अतः यहां राजतंत्र अयथार्थ था और क्रांति यथार्थ थी। इसी तरह विकासक्रम के दौरान जो पहले यथार्थ था, वह अयथार्थ बन जाता है और अपनी आवश्यकता से, अस्तित्व के अपने अधिकार से, अपनी बुद्धिसंगतता से हाथ धो बैठता है। *मृतप्राय यथार्थता के स्थान पर एक नई जीवनक्षम यथार्थता आती है– वह शांतिपूर्ण तरीके से आती है यदि पुरातन में बिना संघर्ष के ही मौत के घाट लग जाने की बुद्धि हो; वह बलपूर्वक आती है यदि पुरातन*

उसका प्रतिरोध करे।"(लुडविग फायरबाख और क्लासिकीय जर्मन दर्शन का अन्त, अध्याय–1, जोर हमारा)

ऊपर उद्धृत किये गये त्यागी जी के कथन में इतना तो वे खुद भी स्वीकार करते हैं कि भारतीय पूंजीपति वर्ग का ब्रिटिश साम्राज्यवादी पूंजीपति वर्ग के साथ समझौता भारत में उठ रही क्रांति की लहर को दबा देने के चलते ही हुआ है। यानी ब्रिटिश शासक इस बात से अवश्य ही डर में थे कि कहीं क्रांति की लहर उन्हें उखाड़ न फेंके और भारतीय पूंजीपति वर्ग का भी यही भय था इसलिए भारतीय पूंजीपति वर्ग ने "क्रांति की लहर का गला घोंट देने" के फलस्वरूप ही घृणित समझौते के जरिये सत्ता हासिल की थी। पर सवाल यह है कि क्रांति का गला घोंट देने के जरिये ही यदि उत्पीड़ित देश के पूंजीपति वर्ग को सत्ता हासिल हो जाये तो क्या इसे प्रतिक्रांति का नाम देकर इस यथार्थ को नकार दिया जाये कि उत्पीड़ित राष्ट्र के सर्वहारा वर्ग का राजनैतिक संघर्ष उपनिवेशवाद विरोधी–सामंतवाद विरोधी मंजिल से गुजर कर पूंजीवाद विरोधी मंजिल में प्रवेश कर गया है? समाजवादी क्रांति अनिवार्य तौर पर पूंजीवाद के विरुद्ध होती है और पूंजीवाद पूंजीपति वर्ग का शासन होता है। इसीलिए मार्क्स–एंगेल्स ने *कम्युनिस्ट घोषणापत्र* के अध्याय–एक में लिखा है कि हर देश के सर्वहारा वर्ग को "पहले अपने ही पूंजीपतियों से निबटना होगा", वे लिखते हैं:

> "पूंजीपति वर्ग के ख़िलाफ़ सर्वहारा वर्ग का संघर्ष, यद्यपि अंतर्य की दृष्टि से नहीं, तथापि रूप की दृष्टि से शुरू में राष्ट्रीय संघर्ष होता है। हर देश के सर्वहारा वर्ग को, ज़ाहिर है, *पहले अपने ही पूंजीपतियों से निबटना होगा।*" (पृष्ठ–50)

अगर सर्वहारा अधिनायकत्व के लिए जैसा कि मार्क्स–एंगेल्स ने लिखा कि "हर देश के सर्वहारा वर्ग को पहले अपने ही पूंजीपतियों से निबटना होगा", एक पूर्व शर्त है तो फिर इस पूर्व शर्त की पूर्ति के लिए समाजवादी क्रांति से पहले जनवादी क्रांति को सम्पन्न किया जाना अनिवार्य है। लेकिन जनवादी क्रांति की इस पूर्व शर्त को लासाल ने 1848 में और उन्हीं के पदचिन्हों पर चलते हुए ट्रॉट्स्की ने 1906 में दरकिनार करते हुए जनवादी क्रांति के चरण में ही सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व की प्रस्थापना को ला खड़ा किया। लासालवाद और ट्रॉट्स्कीवाद इस प्रकार क्रांति के जनवादी चरण अथवा बुर्जुआ जनवादी चरण को लांघ जाता है, जबकि मार्क्स ने *पूंजी* के *प्रथम खंड* की एक भूमिका में लिखा है कि क्रांति के चरण को लांघा नहीं जा सकता। देखें, मार्क्स लिखते हैं:

> "...और जब कोई समाज अपनी गति के स्वाभाविक नियमों का पता लगाने के लिए सही रास्ते पर चल पड़ता है, –और इस रचना का अंतिम उद्देश्य आधुनिक समाज की गति के आर्थिक नियम को खोल कर रख देना ही है, –तब भी अपने *सामान्य विकास के क्रमिक चरणों में सामने आने वाली रुकावटों को वह न तो हिम्मत के साथ छलांग मारकर पार कर सकता है और न ही कानून बना कर उन्हें रास्ते से हटा सकता है।* लेकिन वह प्रसव की पीड़ा को कम कर सकता है और उसकी अवधि को छोटा कर सकता है।" (पूंजी, प्रथम खंड, पहले जर्मन संस्करण की भूमिका, पृष्ठ 19, जोर हमारा)

उपनिवेशवाद विरोधी–सामंतवाद विरोधी क्रांति के जनवादी चरण में समझौतावादी पूंजीपति वर्ग का सत्ता में आ जाना प्रतिक्रांति नहीं कहलाता – सामंती एकतांत्रिक और औपनिवेशिक निरंकुश सत्ताओं के स्थान पर यदि क्रांति अथवा समझौते के जरिए पूंजीवादी जनवादी सत्ता कायम हो जाए तो ट्रॉट्स्कीवादी इसे प्रतिक्रांति की संज्ञा देते हैं जोकि मार्क्सवाद–लेनिनवाद के विपरीत है। ट्रॉट्स्कीवादी गुलाम राष्ट्र और राजनैतिक रूप से स्वाधीन राष्ट्र में कोई फर्क नहीं करते। राजनैतिक स्वाधीनता यदि किसी राष्ट्र को उस राष्ट्र के पूंजीपति वर्ग के नेतृत्व में हासिल हो तो ट्रॉट्स्कीवादी इस राजनैतिक स्वाधीनता को किसी भी प्रकार से उस राष्ट्र के सर्वहारा वर्ग के लिए कोई आगे बढ़ा हुआ कदम नहीं मानते बल्कि उसे प्रतिक्रांति की ही संज्ञा देते हैं। सर्वहारा वर्ग के लिए निरंकुशता और जनवाद में वे कोई फर्क नहीं मानते। इस प्रकार की ट्रॉट्स्कीवादी अवस्थिति के विपरीत '*चीन में जनवाद और नरोदवाद*' नामक लेख में लेनिन लिखते हैं:

> "...पश्चिमी बुर्जुआ वर्ग सड़ चुका है जिसके सामने अभी भी उसकी कब्र खोदने वाला (सर्वहारा वर्ग) खड़ा है। लेकिन एशिया में अभी भी वह बुर्जुआ वर्ग है, जो सच्चे जुझारू और सुसंगत जनवाद का प्रतिनिधित्व करने में समर्थ है और जो 18वीं शताब्दी के अंत में फ्रांस के महान् ज्ञान–प्रसारकों और महान हस्तियों का सुयोग्य साथी है। जो एशियाई बुर्जुआ वर्ग ऐतिहासिक दृष्टि से प्रगतिशील कार्य करने में अब भी समर्थ है, उसका मुख्य प्रतिनिधि अथवा मुख्य सामाजिक आधार किसान है।" (एशिया का जागरण, पृष्ठ–12)

लेनिन ने यहां स्पष्ट लिखा कि सड़–गल चुके साम्राज्यवादी बुर्जुआ वर्ग की तुलना में "एशियाई बुर्जुआ वर्ग ऐतिहासिक दृष्टि से प्रगतिशील कार्य करने में अब भी समर्थ है"। लेकिन ट्रॉट्स्कीवादी इस प्रकार की मार्क्सवादी–लेनिनवादी समझ को सिरे से नकार कर चलते हैं। चलते–चलते एक बात और कह दी जाए कि ब्रिटिश शासक वर्ग द्वारा भारतीय पूंजीपति शासित वर्ग को समझौते के जरिये सत्ता का हस्तांतरण सुधारवाद की श्रेणी में भी नहीं आता, क्योंकि सुधारवाद खुद सत्ता का हस्तांतरण नहीं होता बल्कि सत्ता अपने हाथ में रखते हुए रियायतें मात्र देना होता है। लेनिन सुधारवाद क्या है इसे परिभाषित करते हुए अपनी रचना '*क्या बोल्शेविक राज्यसत्ता को हाथ में रख सकते हैं?* में लिखते हैं:

> "...सुधारवाद का अर्थ शासक वर्ग का उन्मूलन नहीं, सिर्फ उसके द्वारा रिआयतों का दिया जाना है; उसका अर्थ यह है कि शासक वर्ग रिआयतें तो देता है परंतु सत्ता उसके ही हाथ में रहती है।" (संकलित रचनाएं दस खण्डों में, खंड–7, पृष्ठ 279)

अंत में फिर एक बार लेनिन की इस शिक्षा को याद करा दें कि :

> "...ज़मीन और आज़ादी की लड़ाई जनवादी लड़ाई है। पूंजी के शासन के उन्मूलन की लड़ाई समाजवादी लड़ाई है।" (सर्वहारा वर्ग और किसान समुदाय, संकलित रचनाएं दस खंडों में, खंड 3, पृष्ठ 220)

.....

छठी/अंतिम किश्त का इंतजार करें...

तिथि: 22 नवम्बर 2021 | कुरुक्षेत्र

(लेखक 'शहीद भगत सिंह दिशा मंच' के संयोजक हैं।)

(लेख की पहली किश्त 'यथार्थ' वर्ष 2 [संयुक्तांक 3-4], दूसरी [अंक 5], तीसरी [अंक 6] व चौथी [अंक 7] में प्रकाशित हुई है।)